# प्रेमचंद के उपन्यास : प्रमुख स्त्री पात्र

*''हर निर्मला की आँखों के*
*आँसू पढ़ते थे तुम*
*हर सुमन की व्यथा को*
*भाषा देते थे तुम*
*हर जालपा में भरते थे नया आत्म विश्वास तुम*
*हर मुन्नी की दर्द भरी चीखों को सुनते थे तुम*
*हर सुखदा के साथ मोर्चे पर*
*खड़े होते थे तुम*
*हर धनिया की आवाज में आवाज मिलाते थे तुम*
*हर शोषित–पीड़ित इंसान की लड़ाई में*
*कलम के सिपाही बन लड़ते थे तुम।''*[1]

## प्रेमचंद की स्त्री दृष्टि

प्रेमचंद का युग नारी आन्दोलन का युग भी था। उनके जन्म के समय में पुनर्जागरण की राष्ट्रव्यापी आन्दोलन स्वतन्त्रता के आन्दोलन के साथ–साथ चल रहा था। पुनर्जागरण आन्दोलन के फलस्वरूप ही कई अमानुषिक कुरीतियों पर वैधानिक प्रतिबन्ध लगना सम्भव हुआ। सन् 1829 में सती प्रथा निषेधक कानून बनाया गया। बाल विवाह निषेधक शारदा अधिनियम 1929 में पारित हुआ जिसके अनुसार विवाह के समय कन्या की उम्र चौदह और वर की आयु अट्ठारह वर्ष होनी चाहिए। तलाक का सर्वप्रथम प्रस्ताव भारतीय राष्ट्रीय सामाजिक परिषद द्वारा सन् 1924 में लाया गया, जिसका तीव्र विरोध हुआ था। विधवा विवाह के पक्ष में समाज

सुधारक बराबर कार्य कर रहे थे। ईश्वरचन्द्र विद्यासागर, केशवचन्द्र सेन, ज्योतिबा फुले और दयानन्द सरस्वती ने इस दिशा में महत्त्वपूर्ण कार्य किया। स्त्री शिक्षा का भी खूब प्रचार हुआ। आज़ादी की लड़ाई में भी स्त्रियों की समान भागीदारी थी। खुद प्रेमचंद की धर्मपत्नी शिवरानी देवी पिकेटिंग करते हुए गिरफ्तार हुई थीं।

नारी की तत्त्कालीन दशा से प्रेमचंद सन्तुष्ट नहीं थे। उन्होंने सिर्फ कथा साहित्य के माध्यम से ही नहीं अपने लेखों और संपादकीय टिप्पणियों में भी स्त्री की स्वतंत्रता और अधिकार का लगातार समर्थन किया। प्रेमचंद के कथा साहित्य में हमें हर वर्ग, हर जाति और हर धर्म की स्त्री का चित्रण मिलता है। स्त्री को जिस दोहरे शोषण का शिकार होना पड़ रहा था, प्रेमचंद उससे भली–भाँति परिचित थे। शरत्चन्द्र की तरह प्रेमचंद की सम्पूर्ण सहानुभूतियाँ स्त्रियों के साथ थीं। शरत् की तरह प्रेमचंद भी मानते थे कि पतित कही जाने वाली स्त्रियों में भी मानवीय गरिमा का भाव अवश्य होता है, आवश्यकता उसके प्रस्फुटन की है। शरत् की नायिकाएँ त्यागमयी, सहनशील, करुणामयी हैं लेकिन उनके सारे गुणों का सामाजिक धरातल लुप्त है। इसके विपरीत प्रेमचंद की सभी स्त्री पात्र कहीं ज्यादा सक्रिय, संघर्षशील और सचेत हैं; इसलिए वे ज्यादा विश्वसनीय लगती हैं। उनके जीवन की समस्याएँ केवल उनकी नहीं हैं। वे तत्कालीन भारत की नारी जाति की समष्टिपरक समस्याएँ हैं। जिनसे उस युग की नारी जाति संघर्ष कर रही थी। प्रेमचंद ने अपने साहित्य में इसी संघर्ष को अभिव्यक्ति प्रदान की है। नारी–मुक्ति का यह संघर्ष अभी वर्तमान है। इसलिए प्रेमचंद का साहित्य आज भी हमारे लिए प्रासंगिक है।

प्रेमचंद ने अपने कथा–साहित्य में नारी–जीवन के हर पहलू को चित्रित किया है। उनके जीवन की प्रत्येक समस्या, उनके चरित्र–शील–गुण के प्रत्येक पक्ष, उनमें विद्यमान सेवा, साहस, त्याग, क्षमा, करुणा, दृढ़ता और संयम जैसे उच्च मानवीय गुणों के साथ–साथ ईर्ष्या, द्वेष, आभूषणप्रियता, रूढ़िवादिता, धर्मभीरूता, अन्धविश्वास, जैसी दुर्बलताओं को भी चित्रित किया है। वस्तुतः हमारी नारी विषयक दृष्टि कई तरह के अन्तर्विरोधों का शिकार होती है। प्रेमचंद में भी ये अन्तर्विरोध

मौजूद थे, जिसकी अभिव्यक्ति उनके साहित्य में हुई है। लेकिन इन अन्तर्विरोधों के बावजूद उनकी नारी–विषयक दृष्टि में निरन्तर परिवर्तन हुआ है और जीवन के दूसरे क्षेत्रों की तरह यहाँ भी उनकी दृष्टि प्रगतिशीलता की ओर उन्मुख है। लेकिन इन अन्तर्विरोधों को जाने–समझे बिना प्रेमचंद के नारी चरित्रों को नहीं समझा जा सकता और न ही उनके नारी सम्बन्धी दृष्टिकोण को।

''प्रेमचंद के नारी सम्बन्धी विचार उनके जीवनानुभवों से निःसृत हुए थे। एक ओर वे नारी की तात्कालिक स्थिति से असन्तुष्ट थे और उसे बदलने के लिए प्रतिबद्ध थे, वहीं दूसरी ओर वे नारी–मुक्ति की पश्चिमी आदर्श के प्रति भी शंकालु थे। सेवा, करुणा, पवित्रता और क्षमा जैसे सामन्ती मूल्यों को उन्होंने अपने साहित्य में जिस दृढ़ता से प्रस्तुत किया है तथा कहीं–कहीं नारी के लिए इन आदर्शों का उल्लंघन अक्षम्य तक माना है, उससे ऐसा प्रतीत होता है कि प्रेमचंद की नारी विषयक दृष्टि प्रतिगामी थी। सेवा का मार्ग, शूद्रा, स्वर्ग की देवी, मर्यादा की वेदी, शाप, रानी सारन्धा जैसी कहानियाँ तथा 'रंगभूमि', 'कर्मभूमि', 'गबन', 'गोदान' जैसे उपन्यासों में प्रेमचंद ने नारी–चरित्रों को इन–मूल्यों से विभूषित किया है।''[2] प्रश्न यह है कि क्या प्रेमचंद स्त्रियों के सामन्ती आदर्श को ही श्रेयस्कर समझते थे? क्या वे नारी की आर्थिक व सामाजिक स्वतंत्रता के विरोधी थे? क्या वे नारी–मुक्ति के शत्रु थे? ऐसे कई सवाल हमारे दिमाग में उपजते हैं जिसका जवाब पाये बिना प्रेमचंद के नारी सम्बन्धी विचारों को समझना कठिन होगा।

प्रेमचंद ने नारी सम्बन्धी विचारों की ठोस अभिव्यक्ति 'गोदान' में की है। इस उपन्यास में मिस्टर मेहता जो विश्वविद्यालय में दर्शनशास्त्र के प्रोफेसर हैं, एक लम्बे व्याख्यान में नारी सम्बन्धी अपने विचारों को प्रस्तुत करते हैं। मेहता के सम्बन्ध में डॉ. राम विलास शर्मा का विचार है, *''अगर मेहता से होरी को जोड़ा जा सके तो जो व्यक्ति बनेगा, वह बहुत कुछ प्रेमचंद से मिलता–जुलता होगा। मेहता को यदि उन्होंने अपने विचार दिये हैं तो होरी को बराबर परिश्रम करते रहने की दृढ़ इच्छा शक्ति।''*[3] उक्त कथन का तात्पर्य यह है कि प्रेमचंद के विचार मेहता के माध्यम से

अभिव्यक्त हुए हैं। मेहता पूँजीपतियों और ज़मींदारों द्वारा किए जाने वाले शोषण का विरोध करता है लेकिन नारी सम्बन्धी उसके विचार मध्ययुगीन हैं। *''मेहता स्त्री को पुरुष से श्रेष्ठ मानता है, बराबर नहीं।..... वह क्षमा, त्याग और अहिंसा को जीवन के उच्चतम आदर्श घोषित करता है, जिसे नारी प्राप्त कर चुकी है लेकिन पुरुषों को अभी प्राप्त करना है..... वह वोट को नए युग का मायाजाल मानता है और स्त्रियों को उसके छलावे में न आने की सलाह देता है। वह नारी के पश्चिमी आदर्श को गलत मानता है, नारी स्वतंत्रता को विलासिता का दूसरा रूप तथा घर के जीवन को उच्छृंखलता समझता है।..... वह प्रेम विवाह का विरोधी है।..... सेवा और त्याग को भारतीय नारी का सबसे बड़ा आभूषण समझता है।..... संसार में सबसे बड़े अधिकार सेवा और त्याग से मिलते हैं।..... मेहता तलाक के अधिकार का विरोध करता है।..... सच्चा आनन्द, सच्ची शान्ति केवल सेवा–व्रत में है। वही अधिकार का स्रोत है, वही शक्ति का उद्‌गम है। सेवा ही वह सीमेंट है, जो दम्पति को जीवन पर्यन्त स्नेह और साहचर्य से जोड़े रख सकता है, जिस पर बड़े–बड़े आघातों का कोई असर नहीं होता। जहाँ सेवा का अभाव है, वहीं विवाह–विच्छेद है, परित्याग है, अविश्वास है।''*[4] इन मान्यताओं से साफ है कि मेहता के विचार प्रतिगामी और प्रतिक्रियावादी हैं।

प्रेमचंद के नारी पात्र भारतीय जीवन के वास्तविक स्वरूप को प्रदर्शित करने वाले पात्र हैं। पात्रों के नाम के साथ पात्रों का स्वभाव, उनका आचार–व्यवहार, रुचि, सम्पूर्ण समाज, वर्गभेद, जातीय भिन्नता, वैयक्तिक विशिष्टता, जीवन का स्तर, शिक्षा, संस्कृति, परंपरागत थाती आदि ये समग्र विशेषताएँ प्रेमचंद जी के उपन्यासों में एक साथ चित्रित हुई हैं। प्रेमचंद के नारी पात्रों की सबसे बड़ी विशेषता यही है कि वे लेखक द्वारा नहीं बल्कि स्वतंत्र गति से अबाध आगे बढ़ती रहती हैं। शील–गुण के साथ–साथ कुछ मानवीय–दुर्बलताएं भी उनके चरित्र–विकास के क्रम में जुड़ी हुई है। विभिन्न प्रकार की परिस्थितियाँ उनके जीवन में बाधाएँ डालती हैं किन्तु वे बिना उसकी चिन्ता किये आगे बढ़ती रहती हैं। प्रेमचंद ने ही सर्वप्रथम

नारी के सर्वांगीण जीवन और व्यक्तित्व को संवेदनापूर्वक ग्रहण किया। ''प्रेमचंद के नारी पात्रों के सम्बन्ध में इतना निर्विवाद रूप में कहा जा सकता है कि वे प्रेमचंद की आदर्शात्मक चेतना की सजीव छवियाँ हैं। निर्भिकता, स्पष्टवादिता, साहसिकता, करुणा, वत्सलता और दूसरों को नचाने की बुद्धि जितनी नारियों में नैसर्गिक शील के रूप में उभर पाती है। उतनी पुरुषों में नहीं पनप पाती है। पुरुष स्वतंत्र चेता होने के बावजूद रूढ़ियों में आबद्ध दिख पड़ते हैं, नारियाँ भाव–धर्म की साधुकता को आत्मसात् कर चलती हैं।''[5] प्रेमचंद युग की नारी सती–प्रथा, बाल–विवाह, बाधित वैधव्य तथा वृद्ध–विवाह (अनमेल विवाह) आदि कुप्रथाओं का विरोध करने लगी थी। वह शिक्षित है, उसका मस्तिष्क व्यावहारिक शील–शिक्षा से प्रबुद्ध है, उसमें सामाजिक चेतना है और जीवन के हर क्षेत्र में उसका सहयोग अपेक्षित है। सम्मान की पात्री है और इस प्रकार वह सामाजिक सुविधाओं का अपनी सामर्थ्यानुसार उपयोग कर सकने की अधिकारिणी है।

''प्रेमचंद स्त्री–शिक्षा का उद्देश्य संस्कारों का विरोध नहीं मानते थे। यह तो मात्र एक मानसिक विकृति है। उनकी यह धारणा है कि विद्या का फल तो यह होना चाहिए कि मनुष्य में धैर्य और संतोष का विकास हो..... हृदय उदार हो, न कि स्वार्थपरता, क्षुद्रता और शील हीनता का भूत सिर पर चढ़ जाए।''[6]

हर विलास शारदा द्वारा विधवाओं के, पति की सम्पत्ति में अधिकार दिलाने के प्रस्ताव पर बधाई देते हुए प्रेमचंद ने लिखा था– ''मैं आपको दिल से बधाई देता हूँ। स्त्रियाँ आपकी कृतज्ञ रहेंगी, क्योंकि स्त्री और पुरुष दोनों मिलकर जिस सम्पत्ति को जोड़ते हैं, पति के मर जाने के बाद उन्हीं की गोद के बच्चे उनसे मुँह छिपाते हैं। यह प्रस्ताव जिस दिन पास होगा, करोड़ों महिलायें आपको हृदय से आशीर्वाद देंगी और आपकी सदैव कृतज्ञ रहेंगी। उन्हीं के साथ मैं भी आपका कृतज्ञ हूँ।''[7] प्रेमचंद ने नारी–विषयक अपनी मान्यताओं को श्री इन्द्रनाथ मदान को लिखे गये अपने एक पत्र में इस प्रकार स्वीकार किया है– ''मेरी नारी का आदर्श एक ही स्थान पर त्याग, सेवा और पवित्रता का केन्द्रित होना। त्याग, बिना फल की आशा

के हो, सेवा सदैव बिना असन्तोष प्रकट किये हुए हो और पवित्रता सीजर की पत्नी की भांति ऐसी हो, जिसके लिए पछताने की आवश्यकता न पड़े।''[8]

प्रेमचंद के आदर्श नारी पात्रों में प्रमुख हैं– सुखदा, मुन्नी, सलोनी, सकीना (कर्मभूमि), जालपा (गबन), कल्याणी, निर्मला (निर्मला), विद्यादेवी, विलासी, गायत्री (प्रेमाश्रम), मनोरमा (कायाकल्प), धनिया, गोविंदी, मालती (गोदान), सोफिया (रंगभूमि), सुमन (सेवासदन), विरजन, माधवी (वरदान), सुमित्रा (प्रतिज्ञा), शैव्या, पुष्पा (मंगलसूत्र)। वे नारी का वास्तविक रूप उसके मातृत्व में देखते हैं, उसके अन्य रूप तो उस मातृत्व के उपक्रम मात्र हैं। *''.....नारी केवल माता है और इसके उपरान्त वह जो कुछ है वह सब मातृत्व का उपक्रम मात्र है। मातृत्व संसार का सबसे बड़ी साधना, सबसे बड़ी तपस्या, सबसे बड़ा त्याग और सबसे महान विजय है। एक शब्द में उसे लय कहूँगा– जीवन का, व्यक्तित्व का और नारीत्व का भी।'*[9] प्रेमचंद का स्त्री–विमर्श अधिक यथार्थवादी है। वह वर्ग–चेतना सम्पन्न है। प्रेमचंद बिल्कुल समीप से चित्र (पात्रों का) बनाते हैं। इसमें उनकी सूक्ष्म निरीक्षण– शक्ति का योग है। गोदान के प्रौढ़–परिपक्व कलाकृति होने का राज इसमें निहित है।

## प्रेमाश्रम

### बिलासी

'प्रेमाश्रम' उपन्यास की 'बिलासी' मनोहर की पत्नी और बलराज की माँ है। वह एक निम्नवर्गीय कृषक पत्नी है। इस नाते उसके चरित्र में उन सभी विशेषताओं का समावेश है जो ग्राम्य–जीवन का प्रतिनिधित्व करती हैं। वह पति से कहती है– ''जब सारा गाँव घी दे रहा है। तब हम क्या गाँव से बाहर हैं? जैसे बन पड़ेगा देंगे। इसमें कोई अपनी हेठी थोड़े ही हुई जाती है? हेठा तो नारायण ने ही बना दिया है। तो क्या अकड़ने से ऊँचे हो जायेंगे? थोड़ा–सा घी हाँड़ी में है, दो–चार दिन में और बटोर लूँगी, जाकर तौल आना।''[41] उसे पता है कि उसके पति और बेटा बड़े आत्मसम्मानी हैं। अपने पति 'मनोहर' के मानसिक तनाव को दूर करने के लिए वह कादिर के साथ कारिंदा गौस खाँ के पास जाती है। गौस खाँ मनोहर को

क्षमा करने से इंकार कर देता है तो वह राजा साहब के पास जाने से भी नहीं झिझकती है। बिलासी नारी होकर भी निर्भीक और साहसी है। बिलासी दलित किसान की पत्नी है। वह लड़ाई–झगड़ा से सदा दूर रहना चाहती है। किन्तु अधिकार के प्रति पूर्ण सचेत है। गौस खाँ और उसके चपरासी उसे चारागाह में जानवर चराने से रोकते हैं तो इस अन्याय को सहन नहीं कर पाती है। वह कहती है– ''कैसा सरकारी हुकुम? सरकार की जमीन नहीं है।..... हमारे मवेशी सदा से यहाँ चरते आए हैं और सदा यहीं चरेंगे। अच्छा सरकारी हुकुम है, आज कह दिया चरावर छोड़ दो, कल कहेंगे अपना–अपना घर छोड़ो, पेड़ तले जाकर रहो। ऐसा कोई अंधेर है।?''[42] सब तरह के धैर्य, संतोष और शान्ति के बाद भी उसका क्रोध उबल ही पड़ा। उसकी मानवीय आत्मा गाँव के स्थानीय तानाशाहों के दैनिक अन्यायों के प्रति विद्रोह कर ही बैठी। चुपचाप सहन करने की भी एक मर्यादा होती है। बिलासी– *''कह देती हूँ इन जानवरों के पीछे लहू की नदी बह जाएगी। माथे गिर जायेंगे।'' फैजू– हटती है या नहीं चुड़ैल? विलासी– ''तू, हट जा दाढ़ीजार।''*[43]

फैजू के धक्के से गिरकर वह बेहोश हो जाता है, लेकिन जैसा उसने कहा था– माथे गिर जायेंगे। गौस खाँ को जान से हाथ धोना पड़ा। मनोहर औरत की इज़्ज़त के लिए मर–मिटा। नारी, पति और पुत्र की आकांक्षा इसलिए करती है कि उसकी इज़्ज़त सुरक्षित रहे। बिलासी गरीब, लाचार और विवश होते हुए भी अपने सम्मान को खोना नहीं चाहती है, किन्तु इज़्ज़त से उसे पति और पुत्र कम प्यारे नहीं हैं। बिलासी बड़ी आत्मसम्मानी, शक्तिशाली व्यक्तित्व वाली महिला है। प्रेमचंद ही विधवा बिलासी में गर्व–भाव का उदय होना दिखा सकते थे कि विधवा हुई तो क्या, उसने अन्याय के सामने कभी सिर नहीं झुकाया। वह कहती है– *''मैं विधवा हो गयी तो क्या, घर सत्यानास हुआ तो क्या, किसी के सामने आँख तो नीची नहीं हुई।''* यहाँ उसका आत्मगौरव दिखाई पड़ता है। ''परम्परा और रूढ़ियों में जकड़ी हुई, भोली–भाली शान्त किसान गृहिणी बिलासी को जुल्म के हाथों ने ही बरबस विद्रोहिणी के राज–सिंहासन पर ला बिठाया।''[44]

## विद्यावती

'प्रेमाश्रम' की विद्यावती ज़मींदार ज्ञानशंकर की पत्नी है। वह दिखने में सुन्दर, सौम्य एवं उदार विचारों वाली नारी है। विद्या, श्रद्धा जैसी नारियों को धन का थोड़ा भी मोह नहीं है। स्नेह बंधनों के कारण ही वह संयुक्त परिवार को श्रेयस्कर समझती है। ''उसे परमार्थ पर स्वार्थ से अधिक श्रद्धा है।''[45] ज्ञानशंकर अत्यंत धूर्त, लालची और कुचक्री है। विद्यावती, ज्ञानशंकर से कहती है– ''पुरुषार्थी लोग दूसरों की संपत्ति पर मुँह नहीं फैलाते, अपने बाहुबल का भरोसा रखते हैं।''[46]

'प्रेमाश्रम' के संघर्षशील नारी चरित्र और पति के खिलाफ विद्या की घृणा अपने जमाने में उठ रहे नारी–आन्दोलन की हवाओं का पता देते हैं। *''इस नारी आन्दोलन की शुरूआत 19वीं सदी के आखिरी दशकों में हुई थी जब पंडिता रमाबाई, रमाबाई रानाडे, आनंदीबाई जोशी, फ़ानना सारोबजी, एनीजगनाथन और रुक्माबाई जैसी औरतें, अपने घरों में पुरुषों द्वारा थोपे बन्धनों को तोड़कर ऊँची शिक्षा के लिए विदेश गयीं और लौटकर उन्होंने भारत में स्त्रियों के आन्दोलन को आगे बढ़ाया।..... 'प्रेमाश्रम' की रचना से ठीक पहले और उसकी रचना के दौरान 'स्त्री दर्पण' (संपादक– रामेश्वरी नेहरू, 1909, इलाहाबाद) हिन्दी प्रदेश में स्त्रियों की सबसे मुख्य पत्रिका थी।''*[47]

ज्ञानशंकर सम्पत्ति की लालच में विद्यावती की बहन गायत्री को प्रेम–जाल में फंसाता है, दोनों को आपत्तिजनक स्थिति में देखकर विद्या को अपनी पति की अनैतिकता पर गहरा मानसिक संताप होता है। अंत में विद्या अपने पति के पतन को देखने में असमर्थ और उसको सुमार्ग पर लाने में विफल होकर विष खाकर आत्महत्या कर लेती है। उसके चरित्र में त्याग, सत्य, आदर्श–माँ, पत्नी, गृहिणी, कुलवधू के गुण हैं। अन्ततः विद्या के चरित्र में सत्य की विजय होती है। उसका बेटा मायाशंकर भी अपनी माँ के आदर्शों को लेकर ही चलता है।

## श्रद्धा

'प्रेमाश्रम' में 'श्रद्धा' उच्चवर्गीय ज़मींदार वर्ग की नारी पात्र है। श्रद्धा के व्यक्तित्व–शील–गुण में आदर्श पत्नीत्व, सहनशीलता, असीम प्रेम आदि गुण विद्यमान हैं। श्रद्धा, प्रेमशंकर की पत्नी है। प्रेमशंकर जब अमेरिका से लौटते हैं तो पड़ोस के सब लोग कहते हैं कि सागर पार जाने से उनका हिन्दूत्व भ्रष्ट हो चुका है। वह प्रेमशंकर से मिलना नहीं चाहती थी। उसके लिए ''प्रेमशंकर एक कल्पना थे। इसी कल्पना पर वह प्राणार्पण करती थी। उसकी भक्ति केवल स्मृति पर थी, जो अत्यंत, भावमय और अनुरागपूर्ण थी।''[48] श्रद्धा के रग–रग में सतीत्व का विचार रमा है। उसे पता है कि उसका पति सदाचारी है। पति के प्रति उसकी भक्ति–भावना भी है। ग्रामवासियों की सेवा करने के कारण उसके पति को जेल भेज दिया जाता है। उसे अपने पति पर दृढ़ विश्वास है। उसका विश्वास और प्रेम पति को निरंतर प्रेरणा देता रहता है। पति की तरह वह भी लोक सेवा करती है। अपने आभूषण देकर लोक सेवा का व्रत निभाती है। त्याग और सेवा को ही वह आभूषण समझती है। पति की नजर में ''श्रद्धा एक देवी के रूप में खड़ी मालूम होती है। उसकी मुखश्री एक विलक्षण ज्योति से प्रदीप्त थी। वह त्याग और अनुराग की विशाल मूर्ति थी, जिसके कोमल नेत्रों में भक्ति और प्रेम की किरणें प्रस्फुटित हो रही थीं।''[49] वह पतिपरायण और पतिव्रता स्त्री है। वह सतीत्व रक्षा को नारी का सबसे बड़ा आभूषण समझती है। वह गायत्री से कहती है ''तुम्हें भगवान ने धन दिया है उससे अच्छे काम करो। अनाथों और विधवाओं को पालो, धर्मशालाएँ बनवाओ, तालाब और कुएँ खुदवाओ, भक्ति को छोड़कर ज्ञान पर चलो।''[50] इस प्रकार उसके चरित्र में सेवा भाव, त्याग एवं धार्मिकता कूट–कूट कर भरी हुई है।

**गायत्री**

'प्रेमाश्रम' की 'गायत्री' ज़मींदार वर्ग की प्रमुख नारियों में से एक है। वह राय कमलानन्द बहादुर की पुत्री व विद्यावती की बड़ी बहन है। उसके माध्यम से उच्चवर्गीय किन्तु शोषित वैधव्य की यथार्थ अभिव्यक्ति हुई है। गायत्री हिन्दू विधवा

है। ''गायत्री उन स्त्रियों में न थी, जिनके लिए पुरुषों का हृदय एक खुला हुआ पृष्ठ होता है। उसका पति एक दुराचारी मनुष्य था, पर गायत्री को कभी उस पर संदेह नहीं हुआ,..... यद्यपि उसे मरे तीन साल बीत चुके थे, पर वह अभी तक आध्यात्मिक श्रद्धा से उसकी स्मृति की आराधना किया करती थी। उसका निष्कपट हृदय वासनायुक्त प्रेम के रहस्यों से अनभिज्ञ था। किन्तु इसके साथ ही सगर्वता उसके स्वभाव का प्रधान अंग थी।..... उसे धार्मिक और वैज्ञानिक विषयों में विशेष रुचि थी। वह हँसमुख, विनयशील, सरल–हृदय, विनोद–प्रिया रमणी थी, उसके हृदय में लीला और क्रीड़ा के लिए कहीं जगह न थी।''[51] इतना संस्कारवान होने के बावजूद वह उम्र व इच्छा की भार से बच नहीं पाती। गायत्री सरल भाव से ज्ञानशंकर के रूप व गुण पर मुग्ध हो जाती है। मर्यादा की सीमा के अन्त तक पहुँच जाती है। ज्ञानशंकर के साथ फिटन में बैठकर जब वह थिएटर से वापस लौट रही थी, तब ज्ञानशंकर की निकृष्ट हरकत के कारण उसे अत्यन्त आत्मग्लानि होती है। ''केवल आत्मवेदना का ज्ञान आरे के समान हृदय को चीर रहा था। उसकी वह वस्तु लूट गयी, जो उसे जान से भी अधिक प्रिय थी, जो उसके मान की रक्षक, उसके आत्म–गौरव की पोषक, धैर्य का आधार और उसके जीवन का अवलम्ब थी।''[52] उसका आत्मगौरव आज नष्ट हो गया। समाज आँखें बंद करके विधवाओं से जीवन भर ब्रह्मचर्य–व्रत के पालन की अस्वाभाविक माँग करता है। जो कि अन्याय है। यदि गायत्री का पुनर्विवाह किया जाता तो, न तो विद्यावती ज़हर खाकर मरती और न ही गायत्री शिखर से गिरकर प्राण देती।

## रंगभूमि

### सोफिया

सोफिया धर्मप्राण ईसाई पिता जॉन सेवक की पुत्री है। ''मिस सोफिया बड़ी–बड़ी रसीली आँखों–वाली, लज्जाशील युवती थी। देह अति कोमल, मानों

पंचभूतों की जगह पुष्पों से उसकी सृष्टि हुई हो। रूप अति सौम्य मानो लज्जा और विनय मूर्तिमान हो गये हों। सिर से पाँव तक चेतना थी, जड़ का कहीं आभास तक न था।''[53] सोफिया अत्यंत दयालु स्वभाव की है। अपनी माँ से कहती है– ''मामा कुछ तो जरूर दे दो, बेचारा आशा लगाकर इतनी दूर दौड़ा आया था।''[54] जब माँ पैसा नहीं देती है तो वह कहती है, ''सूरदास! खेद है, मेरे पास इस समय पैसे नहीं हैं। फिर कभी आउँगी, तो तुम्हें इतना निराश न होना पड़ेगा।''[55] ''सोफिया सत्यासत्य के निरूपण में सदैव रत रहती थी। धर्मतत्त्वों को बुद्धि की कसौटी पर कसना उसका स्वाभाविक गुण था।..... महात्मा ईसा के प्रति कभी मेरे मुंह से कोई अनुचित शब्द नहीं निकला। मैं उन्हें धर्म, त्याग और सद्विचार का अवतार समझती हूँ!..... धर्म के विषय में मैं कर्म को वचन के अनुरूप ही रखना चाहती हूँ, आत्मा के लिए मैं संसार के सारे दुःख झेलने को तैयार हूँ।''[56] सोफिया में देशभक्ति की भावना भी प्रबल है जब वह सामूहिक संगीत ''सत्य–मार्ग को छोड़ स्वार्थ–पथ पैर नहीं धरना होगा। होगी निश्चय जीत धर्म की यही भाव भरना होगा।''[57] सुनती है तो उसके रोम–रोम से वही ध्वनि, दीपक–से ज्योति के समान निकलने लगी– ''मातृभूमि के लिए जगत में जीना औ मरना होगा।''[58] सोफिया के चरित्र–शील–गुण रानी साहिबा के शब्दों में निम्न रूप में अभिव्यंजित होता है– ''धन्य हैं आप, जो ऐसी सुशीला लड़की पायीं! दया, विवेक की मूर्ति है। आत्मत्याग तो इसमें कूट–कूट कर भरा हुआ है।''[59] उसके पिता और भाई के कारण घर का वातावरण अत्यंत सात्विक और आदर्शमय बना रहता है। बचपन से ही ऐसे वातावरण में पलने के कारण सोफिया के हृदय में भी सात्विक और आदर्शोन्मुख जीवन के प्रति श्रद्धा हो जाती है। जब वह रियासत के युवराज विनय सिंह के कर्तव्यनिष्ठ एवं देश–सेवी, त्यागी जीवन का परिचय पाती है तो वह स्वभावतः उसकी ओर आकृष्ट हो जाती है और धीरे–धीरे यह आकर्षण अटल प्रेम का रूप धारण कर लेता है। विनय के प्रेम में वासना है, पर सोफिया के प्रेम में समर्पण और त्याग है। वह अपने प्रेम के बारे में प्रभु सेवक से कहती है– ''प्रेम व वासना में उतना ही अन्तर है जितना कंचन और

काँच में। प्रेम की सीमा भक्ति से मिलती है, प्रेम के लिए धर्म की विभिन्नता कोई बन्धन नहीं है। ऐसी बाधाएँ उन मनोभावों के लिए हैं, जिसका अन्त विवाह है, उस प्रेम के लिए जिसका अंत बलिदान है।''[60] विनय के प्रति उसका प्रेम आदर्शमय, समर्पणमय एवं त्यागमय है।

सोफिया जब विनय को जेल से छुड़ाने के लिए जाती है। विनय जेल से मुक्त होने से इनकार करता है, इस पर सोफिया को उस पर गर्व होता है और उससे प्रेरित होती है। वह भी समाज सेवा करना चाहती है। जब विनय सिंह उसके लिए सिद्धांतों को भुला देता है, उसके प्रेम के कारण वह अपने साथियों को त्यागकर रियासत के शासकों का पक्ष लेता है तो सोफिया व्यंग्य बाणों से उसको कठोर शब्दों में सुनाती है– *''मैंने तुम्हारी प्रभुशीलता पर अपने को समर्पित नहीं किया था, बल्कि तुम्हारी सेवा सहानुभूति और देशानुराग पर। मैंने इसलिए तुम्हें अपना उपास्य देव बनाया था कि तुम्हारे जीवन का आदर्श उच्च था, तुममें मसीहा की दया, भगवान् बुद्ध के विराग और लूथर की सत्यनिष्ठा की झलक थी। अब तुम्हारा इतना पतन हो गया है कि तुममें सज्जनता, विवेक और पुरुषार्थ का लेशांश भी शेष नहीं रहा। मेरे प्रेम का आधार भक्ति थी। वह आधार जड़ से हिल गया।''*[61]

'सूरदास' के आन्दोलन में अपने प्रेमी विनय सिंह को खोकर, अपने जीवन के प्रति निराश हो जाती है। विनय सिंह की मौत के बाद क्लार्क से विवाह का प्रश्न फिर खड़ा हो जाता है और अंत में सोफिया को पवित्र गंगा की लहरों में ही शान्ति मिलती है– अर्थात् वह आत्महत्या कर लेती है। सोफिया की आत्महत्या के साथ ही उसके सम्पूर्ण कर्मशील जीवन का भी पटाक्षेप हो जाता है। प्रश्न उठता है कि उसके आदर्शवाद, देश–प्रेम, कर्तव्यनिष्ठता, दया, ममता, मनुष्यता और करुणा का ऐसा दुःखद अंत क्यों हुआ? क्या वह स्वाभाविक था? या सोफिया की मौत प्रेमचंद की सबसे बड़ी असफलता थी।

*''उपन्यास के आरम्भ में भिखारी सूरदास को देखकर उसके हृदय में जो करुणा के भाव उठे वे अवसर पाकर विकसित हुए। लेकिन ये भाव सोफिया को अपने क्रिश्चियन मत से दूर ही ले गये। उनमें धीरे–धीरे एक व्यापकता आ गयी, उसका धर्म केवल पुस्तकों में लिखे नियमों में सीमित नहीं रह सका– वह सम्पूर्ण मानवता को ही अपना धर्म समझने लगी।'*[62]

**रानी जाह्नवी**

रानी जाह्नवी के व्यक्तित्व शील–गुण में आदर्श माँ, वीरता, साहस, त्याग, सेवा, कर्तव्यनिष्ठता, आत्म–सम्मान, पतिव्रता इत्यादि गुणों का समन्वित रूप दृष्टिगोचर होता है। वह राष्ट्रीय विचारों की महिला है। इसलिए वह बचपन से ही अपने पुत्र विनय को इस प्रकार रखती है कि उसमें राष्ट्रोचित गुणों का विकास हो। विनय को वह त्याग, तपस्या का जीवन बिताने की शिक्षा देती है। किशोरावस्था में ही उसे देश के प्रति भक्ति तथा सेवा का व्रत दिया जाता है। इस तरह रानी जाह्नवी संतान की प्रारंभिक शिक्षा को कर्तव्य समझती है। वह अपने पुत्र के जीवन में विलासिता से अधिक महत्त्व कर्तव्य को देती है। वह स्पष्ट कहती है– *''जातिरक्षा के लिए उसे प्राण भी देना पड़ा तो मुझे ज़रा भी शोक न होगा, शोक तब होगा जब मैं उसे ऐश्वर्य के सामने सिर झुकाते या कर्तव्य के क्षेत्र में पीछे हटते देखूँगी।'*[63] जब उसे पता चलता है कि विनय और सोफी एक–दूसरे से प्रेम करते हैं तो वह उसी क्षण सोफी को विनय से दूर कर देती है। उसके इसी नियंत्रण का फल है कि विनय आत्मग्लानि से आकुल होकर पाण्डेयपुर के सत्याग्रह में प्राणाहुति देता है। माता का महत्त्वपूर्ण परायण वीर हृदय भीतर से हाहाकार करने पर भी सोफ़िया से यही कहती है– *''क्यों रोती हो बेटी? विनय के लिए? वीरों की मृत्यु पर आँसू नहीं बहाये जाते, उत्सव के राग गाये जाते हैं, मेरे पास हीरे और जवाहरात होते तो उसकी लाश पर लुटा देती। मुझे उसके मरने का दुःख नहीं है। दुःख होता अगर वह आज प्राण बचाकर भागता। यह तो मेरी चिरसिक्त अभिलाषा थी,..... ईश्वर मुझे भी कोई ऐसा ही पुत्र देता जो उन्हीं वीरों की भांति मृत्यु से खेलता, जो अपना*

*जीवन देश और जाति के लिए हवन कर देता, जो अपने कुल का मुख उज्ज्वल करता। मेरी वह कामना पूरी हो गई।'*[64]

पति की सेवा में जाह्नवी का पूर्ण विश्वास है। वह पति परमेश्वर की उपासना में ही पत्नी का कल्याण एवं धर्म समझती है। इस प्रकार रानी जाह्नवी आदर्श माता, पत्नी दोनों रूपों में शील–गुण सम्पन्न है। राजपूत–नारी होने के नाते उसे आत्मसम्मान सर्वप्रिय है। आत्मसम्मान का उदात्त रूप ही आत्मगौरव है। आत्मगौरव के कारण ही रानी, आत्मगौरव की रक्षा के आगे पुत्र–रक्षा को हेय समझती है। उसके अनुसार, *''संसार में कोई ऐसी वस्तु भी है जो संतान से भी अधिक प्रिय है–वह आत्मगौरव है।'*[65] वह आगे कहती है–*''दिव्य–मृत्यु, दिव्य–जीवन से कहीं उत्तम है.....जाह्नवी ने विनय का मस्तक अपनी गोद में लिया, उसे छाती से लगाया, उसका चुम्बन किया और शोक–सभा की ओर गर्व–युक्त नेत्रों से देखकर बोली– यह युवक, जिसने विनय पर अपने प्राण समर्पित कर दिये, विनय से बढ़कर है। क्या कहा? मुसलमान है! कर्तव्य के क्षेत्र में हिन्दू और मुसलमान का भेद नहीं दोनों एक ही नाव में बैठे हुए हैं, डूबेंगे, तो दोनों डूबेंगे, बचेंगे तो दोनों बचेंगे। मैं इस वीर आत्मा की यहीं मजार बनाउँगी।'*[66]

## गबन

### जालपा

'गबन' प्रेमचंद का सामाजिक उपन्यास है। 'गबन' मध्यवर्गीय जीवन की विषमताओं और विडंबनाओं का बड़ा ही हृदयस्पर्शी चित्रण प्रस्तुत करता है। जालपा जैसी मध्यवर्गीय नारी पात्र की आभूषण प्रियता ही इस उपन्यास की कथावस्तु की धुरी है। समाज में व्याप्त आभूषणप्रियता की भावना किस हद तक एक दुःसाध्य कुप्रथा बन गई है, यहाँ प्रेमचंद ने इस उपन्यास में चित्रित किया है।

जालपा को गहनों का शौक है। बचपन से उसने चंद्रहार का सपना देखा है। प्रेमचंद लिखते हैं– ''जालपा को गहनों से जितना प्रेम था, उतना कदाचित् संसार की और किसी वस्तु से न था।''[79] रमानाथ को अच्छी नौकरी मिलने की खबर सुनकर वह सबसे पहले अपने लिए चन्द्रहार बनवाने की इच्छा प्रगट करती है। इसके लिए वह कर्ज ले–लेकर ग़बन जैसा कुकर्म कर बैठता है और ग्लानि से बचने के लिए घर से भागकर कलकत्ता में बूढ़े खटीक देवीदीन के यहाँ आश्रय पाता है। सरकारी गवाह बनकर वह क्रान्तिकारियों को सज़ा दिलाता है लेकिन जालपा से फटकारे जाने पर–जो उसे ढूँढ़ती हुई कलकत्ता पहुँच गई है वह जज के सामने सच्ची बात कह देता है। मुक़दमा फिर होता है और क्रान्तिकारी रिहा कर दिए जाते हैं।

प्रेमचंद के नारी पात्रों में 'जालपा' एक नए ढंग की स्त्री पात्र है। गहनों के लिए हठ करने वाली जालपा के चरित्र में कितना बड़ा गुणात्मक परिवर्तन आ गया। ''वह परिस्थितियों से टक्कर लेती है लेकिन कभी धैर्य नहीं खोती। भारी से भारी मुसीबत पड़ने पर वह विवेक से काम लेती है और कठिनाइयों का सामना करने के लिए नए–नए दाँव–पेंच निकाल लेती है, वह एक ईमानदार और साहसी स्त्री है।''[80] चन्द्रहार बेचकर पति का कर्ज़ चुकाती है तो वह खुद को गौर्वान्वित महसूस करती है। अब उसमें सहनशीलता आ गयी है। जालपा समझ जाती है कि पति को पाना ही उसका लक्ष्य है। पति के प्रति अब उसका प्रेम भी जाग उठता है और त्याग–भावना भी जाग उठती है। वह सब गहनों तथा ऐश्वर्य की वस्तुओं को उठाकर गंगा जी में फेंक आती है। वह यह जान जाती है कि आत्म–सम्मान की भावना नारी के लिए परमावश्यक होती है। जालपा के चरित्र में मनुष्यता कूट–कूट कर भरी है। रमानाथ द्वारा झूठी गवाही दिये जाने से दिनेश नाम के युवक को फाँसी की सजा सुनाई जाती है। जालपा को बड़ा खेद होता है, पर वह हार नहीं मानती। जालपा देश भक्त नारी है। देश की सेवा करने वालों के लिए उसके दिल में सहज सम्मान है और देश के साथ विश्वासघात करने वालों के लिए उसके पास केवल रोष और घृणा है। वह रमा से कहती है– *''तुम्हारा धन और वैभव तुम्हें मुबारिक हो, जालपा उसे पैरों से ठुकराती है। तुम्हारे खून से रंगे हुए हाथों के स्पर्श से मेरी देह में छाले पड़ जाएँगे। जिसने धन और पद के लिए अपनी आत्मा बेच दी, उसे मैं मनुष्य नहीं समझती। तुम मनुष्य नहीं हो, तुम पशु भी नहीं हो, कायर हो! कायर!''*[81] जालपा भारतीय वीर नारियों की प्रतिनिधि पात्र है। वह स्नेह में जितनी कोमल है, घृणा में उतनी ही कठोर। जालपा भारत की उगती हुई नारीत्व है।

जालपा की फटकार से रमा के चरित्र में काफी परिवर्तन होता है। वह न्यायालय में कहता है– *''जालपा के त्याग, निष्ठा, और सत्यप्रेम ने मेरी आँखे खोली हैं।''*[82] जालपा के चरित्र में सत्य, प्रेम, त्याग, दया, सेवा, समता, हृदयता, देशभक्ति,

मानव–प्रेम की भावना, की व्यापकता है। दिनेश के परिवार की वह सच्चे दिल से सेवा करती है। रतन को बहन के रिश्ते से सहानुभूति देती है। जोहरा–जैसी वेश्या को भी वह अपने साथ रखती है, यह उसके प्रेम की व्यापकता है। अपने इन कार्यों द्वारा जालपा भारतीय नारियों के लिए एक आदर्श प्रस्तुत करती है। चन्द्रहार के संकीर्ण दायरे से निकलकर वह मानव तथा देश–प्रेम की विशाल सीमा तक पहुँच गयी। यह गुणात्मक परिवर्तन ही जालपा के चरित्र की विशिष्टता है।

अन्ततः हम सोचने के लिए बाध्य हो जाते हैं कि क्या चन्द्रहार ही जालपा का सच्चा आभूषण है? क्या उसके व्यक्तित्व में उपस्थित उपर्युक्त शील–गुण उसके सच्चे आभूषण नहीं हैं? जब उसकी माँ उसे अपना चन्द्रहार भेजती है तो वह उसे वापस कर देती है, कहती है– ''मैं किसी का दान न लूँगी, चाह वह माता ही क्यों न हो।''[83] उसका यही आत्म–सम्मान उसका सबसे बड़ा रक्षक साबित होता है।